खेल

–जैनेन्द्र कुमार

लेखक–परिचय

कहानीकार जैनेन्द्र का जन्म सन् 1905 ई. में हुआ। हिन्दी कहानी के परम्परागत शिल्प के स्थान पर उसे नवीन धरातल प्रदान किया। स्थूल के स्थान पर सूक्ष्म जगत की ओर ले गए। मानव की आन्तरिक समस्याओं का सूक्ष्म अंकन किया। इससे इनकी कहानियों को नई अन्तर्दृष्टि, संवेदनशीलता और दार्शनिक गहराई प्राप्त हुई। उन्होंने मानव के असामान्य व्यवहार की मानसिक प्रतिक्रियाओं को विश्लेषित किया। जैनेन्द्र अन्तर्द्वन्द्व के द्वारा मानवीय उदात्त भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति करते हैं। इनकी कहानियों में घटनाओं के स्थान पर चरित्र–चित्रण और शैली पर अधिक जोर दिया गया है। जीवन के साधारण संकेतों से ही वे कथा का मार्ग प्रशस्त करते हैं, इस रूप में वे पात्रों के चरित्र–चित्रण पर अधिक जोर न देकर उनकी विशिष्ट गतियों को उद्‌घाटित करते हैं।

जैनेन्द्र की कहानियों में व्यक्ति–सत्य के साथ अहं का विसर्जन भी है और उनके मूल में सहज मानवीय–वृतियाँ हैं, 'खेल', 'एक कैदी', 'पाजेब', 'जाह्नवी', 'अपना–अपना भाग्य', 'नीलम देश की राजकन्या' और 'एक गौ' कहानियों में इसे देखा जा सकता है।

पाठ–परिचय

'खेल' कहानी में बालकों की क्रीड़ाओं का सहज और स्वाभाविक चित्रण है। उनका परस्पर रूठना तथा मनाना हृदय–स्पर्शी है। बालकों के पवित्र एवं निश्छल भावों की अभिव्यक्ति उनके रूठने मनाने में होती है। उनका सहज स्नेह अत्यन्त मर्मस्पर्शी है। कहानी के संवाद बालमन के अनुरूप हैं, और कहानी का अन्त प्रभावोत्पादक है।

**** ****

मौन–मुग्ध संध्या स्मित प्रकाश से हँस रही थी। उस समय गंगा के निर्जन बालुकास्थल पर एक बालक और बालिका, अपने को और सारे विश्व को भूल, गंगातट के बालू और पानी को अपना एकमात्र आत्मीय बना उनसे खिलवाड़ कर रहे थे।

प्रकृति इन निर्दोष परमात्म–खण्डों को निस्तब्ध और निर्निमेष निहार रही थी। बालक कहीं से एक लकड़ी लाकर तट के जल को छटाछट उछाल रहा था। पानी मानो चोट खाकर भी बालक से मित्रता जोड़ने के लिए विह्वल हो उछल रहा था। बालिका अपने एक पैर पर रेत जमाकर और थाप कर एक भाड़

बना रही थी।

बनाते–बनाते भाड़ से बालिका बोली, ''देख, ठीक नहीं बना, तो मैं तुझे फोड़ दूंगी।'' फिर बड़े प्यार से थपका थपकाकर उसे ठीक करने लगी। सोचती जाती थी–इसके ऊपर मैं एक कुटी बनाऊंगी–वह मेरी कुटी होगी। और मनोहर ? नहीं, वह कुटी में नहीं रहेगा, बाहर खड़ा खड़ा भाड़ में पत्ते झोंकेगा। जब वह हार जाएगा, बहुत कहेगा, तब मैं फिर उसे अपनी कुटी के भीतर ले लूँगी।

मनोहर उधर अपने पानी से हिल मिलकर खेल रहा था। उसे क्या मालूम कि यहाँ अकारण ही उस पर रोष और अनुग्रह किया जा रहा है।

बालिका सोच रही थी–मनोहर कैसा अच्छा है। पर वह दंगई बड़ा है। हमें छेड़ता ही रहता है अब के दंगा करेगा तो हम उसे कुटी में साझी नहीं करेंगे। साझी होने को कहेगा तो उससे शर्त करवा लेंगे तब साझी करेंगे।

बालिका सुरबाला सातवें वर्ष में थी। मनोहर कोई दो साल उससे बड़ा था।

बालिका को अचानक ध्यान आया–भाड़ की छत तो गरम होगी। उस पर मनोहर रहेगा कैसे? मैं तो रह जाऊंगी, पर मनोहर बिचारा कैसे सहेगा ? फिर सोचा–उससे मैं कह दूंगी–भई छत बहुत तप रही है, तुम जलोगे, तुम मत जाओ। पर वह अगर नहीं माना ? मेरे पास होने को वह आया ही–तो ? मैं कहूँगी–भई ठहरो, मैं ही बाहर आती हूँ–पर वह मेरे पास आने की जिद करेगा क्या.....? जरूर करेगा, वह बड़ा हठी है–। पर मैं उसे आने नहीं दूँगी। बेचारा तपेगा..... भला कुछ ठीक है। ज्यादा कहेगा, मैं धक्का दे दूँगी और कहूँगी–अरे, जल जाएगा मूर्ख! यह सोचने पर उसे बड़ा मजा–सा आया, पर उसका मुँह सूख गया। उसे मानो सचमुच ही धक्का खाकर मनोहर के गिरने का अद्‌भुत और करुण दृश्य घटित की भाँति प्रत्यक्ष हो गया।

बालिका ने दो एक पक्के हाथ भाड़ पर लगाकर देखा। भाड़ अब बिलकुल बन गया था। माँ जिस सतर्क सावधानी से अपने को हटाकर नवजात शिशु को बिछौने पर लेटा छोड़ती है, वैसे ही सुरबाला ने अपना पाँव धीरे–धीरे भाड़ के नीचे से खींचना शुरू किया। धीरे–धीरे,–धीरे–धीरे। इस क्रिया में वह सचमुच भाड़ को पुचकारती सी जाती थी। उसके पैर पर ही तो भाड़ टिका है पैर का आश्रय हट जाने पर बेचारा कहीं टूट न पड़े। पैर साफ निकालने पर भाड़ अब ज्यों का त्यों टिका रह गया, तब बालिका एक बार आहलाद से नाच उठी।

बालिका एकबारगी ही मनोहर को इस अलौकिक कारीगरी वाले भाड़ के दर्शन के लिए दौड़कर खींच लाने को उद्यत हो गई। मूर्ख लड़का पानी से उलझ रहा है। यहाँ कैसी जबर्दस्त कारगुजारी हुई है, सो नहीं देखता। ऐसा पक्का भाड़ उसने कहीं देखा भी है।

पर सोचा–अभी नहीं, पहले कुटी तो बना लूँ यह सोचकर बालिका ने रेत की एक चुटकी ली और बड़े हौले से भाड़ के सिर पर छोड़ दी। फिर दूसरी, फिर तीसरी, फिर चौथी। इस प्रकार चार चुटकी रेत धीरे–धीरे छोड़कर सुरबाला ने भाड़ के सिर पर अपनी कुटी तैयार कर ली।

भाड़ तैयार हो गया। पर पड़ौस का भाड़ जब बालिका ने पूरा–पूरा याद किया तो पता चला, एक कमी रह गई–धुँआ कहाँ से होकर निकलेगा? तनिक सोचकर उसने एक सींक टेढ़ी करके उसके शीर्ष पर गाड़ दी। बस ब्रह्मांड की सबसे संपूर्ण संपदा और विश्व की सबसे सुन्दर वस्तु तैयार हो गई।

वह उस समय उजड्ड मनोहर को इस अपूर्व स्थापत्य का दर्शन कराएगी, पर अभी जरा थोड़ा देख तो ले और। सुरबाला मुँह बाए आँखें स्थिर करके इस भाड़–श्रेष्ठ को देख देखकर विस्मित और पुलकित होने लगी। परमात्मा कहाँ विराजते हैं, कोई बाला से पूछे, तो वह बताए इस भाड़ के जादू में।

मनोहर अपनी सुरी–सरो–सुर्री की याद कर पानी से नाता तोड़ हाथ की लकड़ी भरपूर जोर से गंगा की धारा में फेंककर जब मुड़ा, तब श्री सुरबाला देवी एकटक अपनी परमात्म–लीला के जादू को बूझने और सराहने में लगी हुई थी।

मनोहर ने बाला की दृष्टि का अनुसरण कर देखा–देवीजी बिलकुल अपने भाड़ में अटकी हुई है। उसने जोर से कहकहा लगाकर एक लात में भाड़ का काम तमाम कर दिया।

न जाने क्या किला फतह किया हो, ऐसे गर्व से भरकर निर्दयी मनोहर चिल्लाया–सुर्रो रानी!

सुर्रो रानी मूक खड़ी थी। उसके मुँह पर जहाँ अभी एक विशुद्ध रस था, वहाँ अब एक शून्य फैल गया। रानी के सामने साक्षात् एक स्वर्ग आ खड़ा हुआ था। वह उसी के हाथ का बनाया हुआ था और वह किसी एक को उसकी एक एक मनोरमता और स्वर्गीयता का दर्शन कराना चाहती थी। हा, हंत! वही व्यक्ति आया और उसने अपनी लात से उसे तोड़ फोड़ डाला! रानी हमारी बड़ी व्यथा से भर गई।

हमारे विद्वान पाठकों में से कोई होता तो उन मूर्खों को समझाता–संसार क्षण–भंगुर है। इसमें दुःख क्या और सुख क्या! जो जिससे बना है, उसे उसी में लय हो जाना है। उसमें शोक और उद्वेग की क्या बात है? यह संसार जल का बुलबुला है, फूटकर एक समय जल में ही खो जाना उसकी सार्थकता है। जो इतना नहीं समझते वे वृथा है। री, मूर्ख लड़की, तू समझ! सब ब्रह्मांड ब्रह्ममय है। उसी में लीन हो जाने के अर्थ है। इससे तू किसलिए व्यर्थ सह रही है? रेत का तेरा भाड़ तेरा कुछ था भी ? मन का तमाशा था। बस हुआ, और लुप्त हो गया। रेत में से होकर रेत में मिल गया। इस पर खेद मत कर, इससे शिक्षा ले। जिसने लात मारकर उसे तोड़ा है, वह तो परमात्मा का साधन मात्र है। परमात्मा तुझे गंभीर शिक्षा देना चाहते है। लड़की, तू मूर्ख क्यों बनती है ? परमात्मा की इस शिक्षा को समझ और उस द्वारा उन तक पहुँचने का प्रयास कर, आदि आदि।

पर बेचारी बालिका का दुर्भाग्य, कोई विज्ञ धीमान् पंडित तत्त्वोपदेश के लिए उस गंगा तट पर नहीं पहुंच सके। हमें तो यह भी संदेह है कि सुर्री एकदम इतनी जड़ मूर्खा है कि यदि कोई परोपकाररत पंडित परमात्म–निर्देश से वहाँ पहुँचकर उपदेश देने भी लगते, तो वह उनकी बात को समझती तो क्या, सुनती तक नहीं। शायद मुँह बिचकाए रहती। पर, अब तो वहाँ निर्बुद्धि, शठ मनोहर के सिवा कोई नहीं हैं, और मनोहर विश्वतत्त्व की एक भी बात नहीं जानता। उसका मन जाने कैसा हो रहा है। जैसे कोई उसे भीतर ही भीतर मसोसकर निचोड़ डाल रहा है लेकिन उसने बनकर कहा, ''सुरो, दुत्त पगली! रूठती है?''

सुरबाला वैसी ही खड़ी रही।

''सुरी, रूठती क्यों है?''

बाला तनिक न हिली।

''सुरी! सुरी! – ओ सुरी!'

अब बनना न हो सका। मनोहर की आवाज हठात् कंपी सी निकली।

सुरबाला अब और मुँह फेरकर खड़ी हो गई। स्वर के इस कंपन का सामना शायद उससे न हो सका।

''सुरी– ओ सुरिया! मैं मनोहर हूँ— मनोहर। मुझे मारती नहीं?''

यह मनोहर ने उसके पीठ पीछे से कहा और ऐसे कहा, जैसे वह यह प्रकट करना चाहता है कि वह रो नहीं रहा है।

''हम नहीं बोलते।'' बालिका से बिना बोले रहा न गया। उसका भाड़ शायद शून्य में विलीन हो

गया। उसका स्थान और सुरबाला की सारी दुनिया का स्थान, काँपती हुई मनोहर की आवाज ने ले लिया।

मनोहर ने बड़ा बल लगाकर कहा, ''सुर्री, मनोहर तेरी पीछे खड़ा है। वह बड़ा दुष्ट है। बोल मत, पर उस पर रेत क्यों नहीं फेंक देती, मार क्यों नहीं देती? उसे एक थप्पड़ लगा–वह अब कभी कसूर नहीं करेगा।''

बाला ने कड़ककर कहा, ''चुप रहो जी!''

''चुप रहता हूँ, पर मुझे देखोगी भी नहीं?''

''नहीं देखती।''

''अच्छा मत देखो। मत ही देखो। मैं अब कभी सामने न आऊँगा, मैं इसी लायक हूँ।

''कह दिया तुमसे, तुम चुप रहो। हम नहीं बोलते।'' बालिका में व्यथा और क्रोध कभी का खत्म हो चुका था। वह तो पिघलकर बह चुका था। यह कुछ और ही भाव था। यह एक उल्लास था जो व्याजकोप का रूप धर रहा था। दूसरे शब्दों में यह स्त्रीत्व था।

मनोहर बोला, ''लो सुर्री, मैं नहीं बोलता। मैं बैठा जाता हूँ। यहीं बैठा रहूँगा। तुम जब तक न कहोगी, न उठूँगा, न बोलूँगा।

मनोहर चुप बैठ गया। कुछ क्षण बाद हारकर सुरबाला बोली, ''हमारा भाड़ क्यों तोड़ा जी ? हमारा भाड़ बनाके दो।''

''लो, अभी लो।''

''हम वैसा ही लेंगे।''

''वैसा ही लो, उससे भी अच्छा।''

''उस पै हमारी कुटी थी, उस पै धुँए का रास्ता था।''

''लो सब लो। तुम बताती जाओ, मैं बनाता जाऊँ।''

''हम नहीं बताएंगे। तुमने क्यों तोड़ा? तुमने तोड़ा, तुम्ही बनाओ!''

''अच्छा, पर तुम इधर देखो तो!''

''हम नहीं देखते, पहले भाड़ बनाके दो।''

मनोहर ने तभी खुशी खुशी एक भाड़ बनाकर तैयार किया। कहा, ''लो भाड़ बन गया।''

''बन गया?''

''हाँ।''

''धुँए का रास्ता बनाया? कुटी बनाई?''

''सो कैसे बनाऊँ–बताओ तो।''

''पहले बनाओ, तब बताऊँगी।''

भाड़ के सिर पर एक सींक लगाकर और एक एक पत्ते की ओट लगाकर कहा, ''बना दिया।''

तुरंत मुड़कर सुरबाला ने कहा, ''अच्छा दिखाओ।''

''सींक ठीक नहीं लगी जी'', ''पत्ता ऐसे लगेगा'' आदि–आदि संशोधन कर चुकने पर मनोहर को हुक्म हुआ–

''थोड़ा पानी लाओ, भाड़ के सिर पर डालेंगे।''

मनोहर पानी लाया।

गंगाजल से कर पात्रों द्वारा वह भाड़ का अभिषेक करना ही चाहता था कि सुर्रो रानी ने एक लात से भाड़ के सिर को चकनाचूर कर दिया।

सुरबाला रानी हँसी से नाच उठी। सोचकर उत्फुल्लता से कहकहा लगाने लगा। उस निर्जन प्रांत में वह निर्मल शिशु–हास्य–रव लहरें लेता हुआ व्याप्त हो गया। सूरज महाराज बालकों जैसे–लाल–लाल मुँह से गुलाबी–गुलाबी हँसी हँस रहे थे। गंगा मानो जान बूझकर किलकारियाँ मार रही थी।

और–और वे लम्बे ऊँचे–ऊँचे दिग्गज पेड़ दार्शनिक पंडितों की भाँति हास्य की सार शून्यता पर मानो मन–ही–मन गंभीर तत्त्वलोचन कर हँसी में भूले हुए मूर्खों पर थोड़ी दया बख्शना चाह रहे थे।

शब्दार्थ–

स्मित – मुस्कराहट,	निर्निमेष – अपलक,	साझी – भागीदार,
विह्वल–व्याकुल (घबराया हुआ),	प्रत्यक्ष – आँखों के सामने,	उद्यत – तैयार,
अलौकिक – अनोखा,	व्याजकोप–क्रोध का बहाना,	विज्ञ – विद्वान,
धीमान् – बुद्धिमान,	शठ – मूर्ख	विलीन – मिल जाना,
तत्त्वोपदेशक–रहस्यात्मक ज्ञान का उपदेश देने वाला,	करपात्र – अंजलि,	रव – आवाज (स्वर),
आश्रय – सहारा,	आह्लाद – प्रसन्नता,	स्थापत्य – भवन निर्माण,
व्यथा – दुःख,	क्षण भंगुर – पलभर में नष्ट होने वाला (अनित्य)।	

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सुरबाला के भाड़ को फोड़कर मनोहर को कैसा लगा–
   (क) जैसे उसने दौड़ जीत ली हो।
   (ख) जैसे उसने किला फतह कर लिया हो।
   (ग) जैसे उसने दौलत प्राप्त कर ली हो।
   (घ) जैसे उसका सबकुछ लूट गया हो। ( )
2. ''सुरी.....ओ सुरिया। मैं मनोहर हूँ.....मनोहर। मुझे मारती नहीं ?'' मनोहर के इस कथन से क्या भाव प्रकट होता है–
   (क) खेद और ग्लानि (ख) स्नेह
   (ग) ऊब और निराशा (घ) विरक्ति ( )
3. सुरौ रानी मूक खड़ी थी। उसके मुँह पर जहाँ अभी एक विशुद्ध रस था, वहाँ अब एक शून्य फैल गया। कारण था–
   (क) मनोहर का झगड़ा
   (ख) मनोहर द्वारा भाड़ को तोड़ डालना
   (ग) मनोहर द्वारा चिढ़ाना
   (घ) मनोहर के अपशब्द सुनना ( )

अतिलघूत्तरात्मक–

1. सुरबाला और मनोहर की उम्र क्या थी ?
2. सुरबाला ने मिट्टी से क्या बनाया था ?

3. ''सुरबाला हँसी से नाच उठी। मनोहर उत्फुल्लता से कहकहा लगाने लगा।'' दोनों की प्रसन्नता का क्या कारण था ?
4. ''कह दिया तुमसे, तुम चुप रहो। हम नहीं बोलते।'' यह वाक्य किसने, किसको और कब कहे ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. सुरबाला के व्यक्तित्व में नारीत्व झलकता प्रतीत होता है। उसे स्पष्ट कीजिए।
2. मनोहर की कांपती हुई आवाज सुनकर सुरबाला पर क्या प्रतिक्रिया हुई ?
3. 'खेल' कहानी के आधार पर बच्चों की बदला लेने की प्रवृति पर प्रकाश डालिए।
4. ''बच्चे देर तक क्रोध को बनाए रखकर रूठे नहीं रहते।'' 'खेल' कहानी के आधार पर इस बाल मनोविज्ञान को समझाइये।
5. ''बच्चों में कल्पनाशीलता होती है।'' सुरबाला के व्यवहार का आधार लेकर बताइये।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. 'खेल' कहानी का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए समीक्षा कीजिए।
2. सिद्ध कीजिए कि जैनेन्द्र की 'खेल' कहानी बाल मनोविज्ञान का निदर्शन कराती है।
3. घर लौटते समय सुरबाला और मनोहर के मध्य क्या बातचीत हुई होगी, कल्पना के आधार पर उत्तर दीजिए।
4. 'खेल' कहानी के आधार पर सुरबाला और मनोहर के चरित्र की विशेषताएं लिखते हुए उनकी तुलना कीजिए।

*****